Journal of Advances and Scholarly Researches in Allied Education
Vol. XV, Issue No. 4, June-2018, ISSN 2230-7540

धार्मिक स्वतंत्रता का अधिकार मौलिक अधिकारों का समीक्षात्मक अध्ययन

Dev Sharma Yajurvedi[1]* Prof. (Dr.) N. K. Thapak[2]

[1] Research Scholar, Swami Vivekananda University, Sagar, Madhya Pradesh

[2] Associate Professor, Swami Vivekananda University, Sagar, Madhya Pradesh

सार – धार्मिक स्वतंत्रता का अधिकार मौलिक अधिकारों की सूची में अत्यंत महत्वपूर्ण अधिकार है। इसलिए धार्मिक स्वतंत्रता के अधिकारों की व्याख्या मौलिक अधिकारों के संदर्भ में किया जाना आवश्यक प्रतीत होता है। अमेरिकी संविधान में धार्मिक स्वतंत्रता के अधिकार का तात्पर्य धर्म और राज्य का पूर्णतः अलगाव है। वहाँ राज्य किसी प्रकार की धार्मिक गतिविधियों में न तो शामिल होता है, और न शामिल होने की अनुमति देता है, तथा वहां का समाज कमोवेश पंथनिरपेक्ष है। ब्रिटेन संवैधानिक रूप से एक धर्मसापेक्ष राज्य है, जबकि उसकी आत्मा पंथनिरपेक्ष है। ब्रिटेन में कोई लिखित संविधान नहीं है। परम्पराओं के अनुसार ब्रिटेन का राजा एगंलिकन चर्च का प्रधान होता है, जो कि एक धार्मिक पद है। इन दोनों अवधारणाओं से अलग भारत में धार्मिक स्वतंत्रता के अधिकार का तात्पर्य व्यक्ति को जहां एक ओर धार्मिक स्वतंत्रता प्रदान करता है, वहीं दूसरी ओर राज्य सभी धर्मों के प्रति समान दृष्टिकोण रखता है।

----------X----------

परिचय

धर्म अन्तःकरण का विषय है। इसे किसी पर थोपा नहीं जा सकता। इसका सीधा सम्बन्ध मन अर्थात् आत्मा से है। मन को मारकर कभी आराधना नहीं की जा सकती। मन से की गयी पूजा, अर्चना और आराधना ही सच्ची, पूजा, अर्चना और आराधना है।

चूंकि धर्म का सीधा सम्बन्घ व्यक्ति की आन्तरिक भावना और विश्वास से है। इसलिए आन्तरिक भावना और विश्वास व्यक्ति की मनोवृत्ति को निर्धारित करते है। भारतीय संविधान ने धर्म की स्वतन्त्रता तो प्रदान की परन्तु ''धर्म क्या है'' को परिभाषित नहीं किया। ऐसा लगता है कि या तो धर्म की परिभाषा देना कठिन है या संविधान निर्माताओं ने धर्म को किसी सीमा में बांधना उचित नहीं समझा।

धर्म की परिभाषा:-

भारतीय संविधान में 'धर्म' शब्द की कोई परिभाषा नही दी गयी है। उच्चतम न्यायालय ने धर्म शब्द की बड़ी विशद् परिभाषा की है। न्यायालय ने कहा कि-''धार्मिक स्वातन्त्रता सैद्धान्तिक विश्वासों तक ही सीमित नहीं है। इसके अन्तर्गत धर्म के अनुसरण में किये गये कार्य भी हैं और इसमें कर्मकाण्डों, धार्मिक, कार्यों, संस्कृति और उपासनाओं की पद्धतियों की गारन्टी है जो धर्म के अभिन्न अंग है। धर्म या धार्मिक परिपाटी का आवश्यक भाग क्या है, उसका निर्धारण न्यायालयों द्वारा विशिष्ट धर्म के सिद्धान्तों के प्रति निर्देशन से किया जायेगा और इसके अन्तर्गत ऐसी परिपाटियाँ आती हैं जिन्हें समुदाय द्वारा धर्म का भाग समझा जाता है।''

अंग्रेजों की ''फूट डालो राज करो'' नीति एवं साम्प्रदायिकता के कारण भारत का विभाजन हुआ यद्यपि संविधान निर्माता धार्मिक कट्टरता व साम्प्रदायिकता से भली-भाँति परिचित थे परन्तु उन्होंने ''भारतीयता'' को राज्य धर्म बनाने की बजाए व्यक्तियों को धार्मिक स्वतन्त्रता प्रदान कर भारतीय संविधान को पंथनिरपेक्ष स्वरूप प्रदान किया।

भारत में प्रत्येक नागरिक को अपने विश्वास के अनुसार किसी भी धर्म को मानने तथा किसी भी ढंग से ईश्वर की पूजा करने की पूर्ण स्वतन्त्रता है।

www.ignited.in

धार्मिक स्वतन्त्रता:-

जहाँ प्रत्येक व्यक्ति को भाषण, विचार, पत्र प्रकाशन व विचरण की स्वतन्त्रता प्राप्त है वहाँ उसे धार्मिक स्वतन्त्रता भी प्रदान की गई हैं संविधान में कहा गया है कि सामाजिक कल्याण, सदाचार तथा स्वास्थ्य के नियमों का विचार रखते हुए प्रत्येक व्यक्ति को धर्म की स्वतन्त्रता प्राप्त होगी। धार्मिक सम्प्रदाओं को अपनी संस्थायें बनाने, धार्मिक प्रचार करने का पूर्ण अधिकार होगा। कोई भी व्यक्ति किसी भी धर्म में विश्वास रख सकेगा। उसे अपना धर्म छोड़कर दूसरा धर्म अपनाने के लिए बाध्य नहीं किया जायेगा। हमारे संविधान निर्माताओं ने इस बात पर विशेष बल दिया है कि स्वतन्त्र भारत पंथनिरपेक्ष (Secular) राज्य होगा। राज्य में प्रत्येक धर्मावलम्बी को बराबर के अधिकार प्राप्त होंगे।

भारत के संविधान में धार्मिक स्वतंत्रता का अधिकार एक मूल अधिकार है तथा भारतीय संविधान के अनु. 25, 26, 27 व अनु. 28 व्यक्ति को धार्मिक स्वतंत्रता का अधिकार देते है। वास्तव में धार्मिक स्वतंत्रता जैसे अति संवेदनशील विषय को मूल अधिकारों में शामिल करना हिन्दू, मुस्लिम, सिख, ईसाई आदि सभी सम्प्रदायों को समान अधिकार देकर भारत की राष्ट्रीय संस्कृति का विकास करना संविधान निर्माताओं का मौलिक उद्देश्य था, जिसके द्वारा न केवल भारत राष्ट्र की एकता व अखण्डता मजबूत होती बल्कि पंथनिरपेक्ष, लोक कल्याणकारी, प्रजातान्त्रिक राज्य की स्थापना को बल मिलता।

अनु. 25-अंतःकरण की और धर्म के अबाध रूप से मानने आचरण और प्रचार करने की स्वतंत्रता-

1. लोक व्यवस्था सदाचार और स्वास्थ्य तथा इस भाग के अन्य उपबन्धों के अधीन रहते हुए सभी व्यक्तियों को अंतःकरण की स्वतंत्रता का और धर्म के अबाध रूप से मानने, आचरण करने और प्रचार करने का समान हक होगा।

2. इस अनुच्छेद की कोई बात किसी ऐसी विद्यमान विधि के प्रवर्तन पर प्रभाव नहीं डालेगी या राज्य को कोई ऐसी विधि बनाने से निवारित नहीं करेगी जो-

(क) धार्मिक आचरण से सम्बद्ध किसी आर्थिक, वित्तीय, राजनैतिक या अन्य लौकिक क्रियाकलाप कविनियमन या निर्बधन करती है;

(ख) सामाजिक कल्याण और सुधार के लिए या सार्वजनिक प्रकार की हिन्दुओं की धार्मिक संस्थाओं को हिन्दुओं के सभी वर्गों और अनुभागों के लिए खोलने का उपबन्ध करती है।

स्पष्टीकरण (1) कृपाण धारण करना और लेकर चलना सिक्ख धर्म के मानने का अंग समझा जाएगा। स्पष्टीकरण (2) खण्ड (2) के उपखण्ड (ख) में हिन्दुओं के प्रति निर्देश का यह अर्थ लगाया जाएगा कि उसके अन्तर्गत सिक्ख, जैन या बौद्ध धर्म के मानने वाले व्यक्तियों के प्रति निर्देश है और हिन्दुओं की धार्मिक संस्थाओं के प्रति निर्देश का अर्थ तदनुसार लगाया जाएगा।

अनुच्छेद 25 प्रत्येक व्यक्ति को-

1. अन्तःकरण की स्वतंत्रता; एवं

2. किसी भी धर्म को अबाध रूप से मानने, उसका आचरण करने और प्रचार करने की स्वतंत्रता प्रदान करता है।

अन्तःकरण का सम्बन्ध आत्मा से है। प्रत्येक व्यक्ति को यह स्वतंत्रता है कि वह अपने अन्तःकरण के अनुसार किसी भी धर्म को माने। अन्तःकरण की स्वतंत्रता का तात्पर्य आत्यन्तिक (absolute) आन्तरिक स्वतन्त्रता से है जिसके माध्यम से व्यक्ति ईश्वर के साथ अपनी इच्छानुसार सम्बन्धों को स्थापित करता है। यह स्वतन्त्रता जब बाह्य रूपों में व्यक्त की जाती है तो उसे 'धर्म का मानना' और 'प्रचार करना' कहते हैं। धर्म के 'मानने' (profess) से तात्पर्य है व्यक्ति द्वारा अपने धर्म के प्रति श्रद्धा एवं विश्वासों का स्वतन्त्रतापूर्वक और खुलेआम घोषित करना। प्रत्येक व्यक्ति अपने धार्मिक विश्वासों को किसी भी रीति से व्यावहारिक रूप दे सकता है। धर्म के 'आचरण' (practice) करने का तात्पर्य धर्म द्वारा विहित कत्तव्यों, कर्मकाण्डों और धार्मिक कृत्यों को प्रदर्शित करने की स्वतंत्रता जो उसके धर्म द्वारा विहित किये गये हों। धर्म के 'प्रचार' (propagate) करने का अर्थ है विचारों को दूसरों तक संप्रेषित करना और इसके लिए उनका प्रकाशन आवश्यक है। 'प्रचार' का अर्थ अपने विचारों को दूसरों तक संप्रेषित करना ही नहीं है वरन् उसको मनवाने के लिए समझाने-बुझाने का भी अधिकार शामिल है, बशर्ते कि इसमें कोई दबाव का तत्व न हो।

बी. इमैनुएल व अन्य बनाम स्टेट ऑफ़ केरल व अन्य के मामले में उच्चतम न्यायालय की दो न्यायाधीशों की खण्डपीठ ने अपने ऐतिहासिक एवं दूरगामी प्रभाव वाले निर्णय मे अभिनिर्धारित किया है कि किसी व्यक्ति को, जिसका धार्मिक विश्वास इसकी अनुमति नहीं देता, राष्ट्रगान

www.ignited.in

गाने के लिए बाध्य नहीं किया जा सकता है-प्रस्तुत मामला, संविधान निर्माण के बाद शायद पहला है जब अन्तःकरण की स्वतंत्रता के आधार पर हमारे राष्ट्रगान को विवाद के घेरे में डाल दिया है।

केरल के नगर कोट्टायम के आस-पास फैले धान के खेतों के बीच एक छोटा-सा कस्बा है-किंडनगूर। यहाँ के एन.एस. हाईस्कूल की प्राचार्या श्रीमती सरस्वती अम्माँ द्वारा छात्रों में अनुशासन लाने हेतु लिये गये निर्णय ने एक राष्ट्रीय बहस को जन्म दे दिया। श्रीमती सरस्वती अम्माँ ने जब प्राचार्या का कार्यभार सँभाला तो पाया कि स्कूल की छुट्टी होते ही विद्यालय में भगदड़-सी मच जाती है; धक्का-मुक्की करते हुए विद्यार्थी जेल से छूटे कैदियों की तरह निकलने को बेताब हो जाते है। इस भगदड़ को अनुशासन में लाने के लिये सरस्वती अम्माँ ने छुट्टी के बाद ''राष्ट्रगान'' के लिए सभी छात्रों को इकट्ठा करना शुरू कर दिया।

विद्यालय में अध्ययनरत् जेहोवा-समुदाय के कुछ छात्रों के अभिभावकों ने श्रीमती सरस्वती अम्माँ से भेंट की तथा सम्प्रदाय की मान्यताओं का हवाला देते हुए उनके बच्चों को राष्ट्र गान की अनिवार्यता से मुक्त करने की प्रार्थना की। श्रीमती सरस्वती अम्माँ ने कहा कि यदि वे शिक्षा-विभाग से ऐसे निर्देश ला सकें कि किसी समुदाय विशेष बच्चों को ऐसी छूट दी जा सकती है तो वे उनके बच्चों को ऐसी छूट दे पायेंगी। इसके बाद मामला बढ़ता गया और केरल विधान सभा तक में गूँज उठी। अधिकारियों ने विद्यालयों में आकर उन बच्चों के अभिभावकों को भी समझाया। अभिभावकों ने जब राष्ट्रगान का सम्मान करने से स्पष्ट मना कर दिया तब सरस्वती अम्माँ ने शिक्षाविद् के नाते छात्रों को निष्कासित कर दिया।

इन बच्चों में से तीन बच्चों के पिता थे वी.के. इमेनुअल को मन्नाम के कुरियाकोस इलियास महाविद्यालय में अंग्रेजी के प्राध्यापक हैं। इन्होंने इस निष्कासन-आदेश के विरूद्ध केरल उच्च न्यायालय में अपील की। उनका कहना था कि राष्ट्रगान गाने के लिए उन्हें बाध्य करना संविधान के अनुच्छेद 25 में प्रदत्त धार्मिक स्वतन्त्रता का उल्लंघन है। शिक्षा-विभाग के एक नियम के अनुसार स्कूलों में सभी बच्चों द्वारा राष्ट्रगान में भाग लेना आवश्यक था। उनका कहना था कि उनका धर्म जेहोवा (उनका ईश्वर) के अलावा किसी अन्य धार्मिक समारोह में भाग लेने की अनुमति नहीं देता है। उनका कहना था कि उन्होंने राष्ट्रगान का अनादर नहीं किया था; क्योंकि जब राष्ट्रगान गाया जा रहा था तब वे आदरपूर्वक खड़े थे किन्तु गायन में भाग नहीं लिया था। निष्कासन के विरूद्ध फाइल की गई याचिका केरल उच्च न्यायालय ने खारिज कर दी और निर्णय दिया कि संविधान के अधीन रष्ट्रगान गाना उनका मूल कत्तव्य था और कोई भी नागरिक अपने धार्मिक विश्वासों के आधार पर राष्ट्रगान गाने से इन्कार नहीं कर सकता है। बच्चों द्वारा राष्ट्रगान के प्रति आदर न दिखाने से राष्ट्र को खतरा होने की आंशका उत्पन्न हो जायेगी; क्योंकि यह लोगों में संविधान के आदेशों की उपेक्षा करने की प्रवृत्ति को बढावा देगा जिसे हमारे संविधान निर्माता प्राप्त करना चाहते थे। अगर कोई धार्मिक विश्वास, लोक व्यवस्था, नैतिकता, स्वास्थ्य और राष्ट्र की एकता एवं अखण्डता के विपरीत है तो उसे लोकहित एवं राष्ट्रहित में त्याग करना होगा। जिसकी अपील उच्चतम न्यायालय में की गई।

उच्चतम न्यायालय ने केरल हाईकोर्ट के निर्णय को उलट दिया और निर्णय दिया कि भारत में राष्ट्रगान गाने के लिये कोई कानूनी बाध्यता नहीं है। अनुच्छेद 25(1) के अधिकार को कार्यपालिका के निर्देश द्वारा विनियमित नहीं किया जा सकता है। छात्रों ने अनु. 51 (अ) के अधीन अपने मूल अधिकार का उल्लंघन नहीं किया था; क्योंकि वे राट्रगान गाये जाते समय आदर दिखाने के लिए खड़े हुए थे और प्रिवेन्शन आफ इनसल्ट टु नेशनल आनर ऐक्ट, 1971 के अधीन उनका कार्य अपराध नहीं था; क्योंकि उन्होंने राष्ट्रगान गाने में कोई बाधा नहीं पहुँचायी थी; अतः न्यायालय ने उनके निष्कासन को रद्द कर दिया।

उक्त निर्णय देते समय न्यायाधीशों ने अमेरिका के उच्चतम न्यायालय के निर्णय का सहारा लिया जो उचित नहीं है कयोंकि भारत में परिस्थितियाँ भिन्न हैं। इस निर्णय के अत्यन्त दूरगामी परिणाम हो सकते है। यहाँ अनेक भाषा, अनेक धर्म के मानने वाले लोग हैं। देश में एकता और अखण्डता को खतरा पैदा करने वाली प्रवृत्तियाँ कार्यरत हैं। राष्ट्रगान गाने, राष्ट्रध्वज के सम्मान से नागरिकों में देश-प्रेम, देश-भक्ति के प्रति संस्कार बनते हैं। उक्त निर्णय राष्ट्रगान, राष्ट्रध्वज और संविधान का अनादर और अवहेलना करने वालों को बढ़ावा देकर देश की एकता और अखण्डता को खतरा पैदा कर सकता है। राष्ट्रगान गाना एवं राष्ट्रध्वज का सम्मान करना प्रत्येक नागरिक का कत्तव्य ही नहीं वरन् उसका धर्म होना चाहिये।

केरल उच्च न्यायालय का निर्णय बिल्कुल ठीक है। व्यक्तिगत हित से राष्ट्रहित सर्वोपरि है। धर्म राष्ट्र और समाज से ऊपर नहीं हो सकता है। कोई धर्म इस बात की अनुमति नहीं देता। उक्त परिणामों को ध्यान में रखते हुए सरकार ने उक्त निर्णय पर पुनर्विचार करने के लिये उच्चतम

न्यायालय में आवेदन प्रस्तुत किया है जो अभी तक लम्बित है।

एस.पी. मीतल बनाम भारत संघ (अरोविले आश्रम का मामला) के मामले में पिटिशनरों ने अरविन्द (आपात प्रावधान) अधिनियम, 1980 की विधिमान्यता को इस आधार पर चुनौती दी कि उससे पिटिशनरों के अनुच्छेद 25 और 26 में दिये गये धार्मिक स्वाधीनता के अधिकारों का उल्लंघन होता था। श्री अरविन्द ने योग की एक नयी प्रणाली प्रतिपादित की और अपने नये दर्शन के प्रसार-प्रचार के लिए एक सोसाइटी बनायी जिसने पांडिचेरी में अरोविले-आश्रम स्थापित किया जिससे श्री अरविन्द के नये दर्शन एवं शिक्षा का प्रचार किया जा सके। सोसाइटी को सरकार और अन्य स्रोतों से अरोविले-आश्रम में निर्माण एवं विकास के लिए दान से पर्याप्त धन प्राप्त हुआ। माँ की मृत्यु के पश्चात् सोसाइटी के कुप्रबन्ध के सम्बन्ध में सरकार को अनेक शिकायतें मिलीं; अतः केन्द्र सरकार ने उक्त अधिनियम पारित करके कुछ समय के लिए सोसाइटी का प्रबन्ध अपने हाथ में ले लिया। उच्चतम न्यायलय ने 4:1 के बहुमत से यह अभिनिर्धारित किया कि सोसाइटी के संविधान, श्री अरविन्द और माँ के बार-बार के कथनों का कि अरोविले एक धार्मिक संस्था नहीं है, सोसाइटी का बंगाल अधिनियम के अधीन पंजीकरण आदि से स्पष्ट है कि न तो सोसाइटी और न ही अरोविले-आश्रम धार्मिक संस्थाएँ हैं और अरविन्द की शिक्षा धार्मिक शिक्षा नहीं है; अतः सरकार द्वारा सोसाइटी और आश्रम का अधिग्रहण अनुच्छेद 25 और 26 द्वारा प्रदत्त अधिकार का उल्लंघन नहीं करता है और संवैधानिक है।

रमेश बनाम भारत संघ के ममाले मे पिटिशनर ने एक लोकहित वाद संस्थित करके न्यायालय से निवेदन किया कि वह समुचित आदेश जारी करके भीष्म साहनी के उपन्यास पर आधारित 'तमस' धारावाहिक को दूरदर्शन पर दिखाये जाने पर रोक लगा दे; क्योंकि इसे देखकर उनकी धार्मिक भावना को ठेस पहुँचाती है। इस धारावाहिक में भारत और पाकिस्तान के बँटवारे के पूर्व के दोनों समुदायों में हुई धार्मिक हिंसा एवं मारकाट के दृश्यों को चित्रित किया गया है। उच्चतम न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया कि यद्यपि इस मामले से पिटिशनर के अनु. 25 मे प्रदत्त अधिकार का उल्लंघन नहीं होता है किन्तु उसे धार्मिक सहिष्णुता कायम रखने के लिए न्यायालय का ध्यान आकर्षित करने का अधिकार है। इस माममे में ऐसा कोई संकट नहीं प्रतीत होता है तथा प्रत्यर्थियों ने सीरियल दिखाने में दुर्भावपूर्वक कार्य नहीं किया है। इसके विपरीत लोगों को इससे शिक्षा ही मिलती है ताकि ऐसे कार्यों को भविष्य में दुहराया न जाये।

बकरीद पर गो-वध मुस्लिम धार्मिक-क्रिया का अंग नहीं है, स्टेट ऑफ़ वेस्ट बंगाल बनाम आशुतोष लाहिरी के मामले में उच्चतम न्यायालय ने नकारात्मक उत्तर देते हुए कि किसी भी क्रिया को तभी आवश्यक अंग माना जा सकता है जब उसका अन्य कोई विकल्प नहीं हो। जहाँ विकल्प हो वहाँ कोई कृत्य या क्रिया आवश्यक अंग नहीं हो सकती। इस प्रकरण में "वेस्ट बंगाल एनिमल इस्लाटर कन्ट्रोल एक्ट, 1950" में की गई व्यवस्था को चुनौती दी गई जो बकरीद के अवसर पर प्रथमतः बकरे का वध करने और सात मुसलमानों के चाहने पर गौ-वध करने की छूट देती है। उच्चतम न्यायालय ने कहा-जब प्रथमतः बकरे की बलि दी जा सकती है तो फिर गाय की बलि दिया जाना आवश्यक नहीं रह जाता।

गुलाम कादर अहमद भाई मेनन बनाम सूरत नगर निगम के मामले में गुजरात उच्च न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया है कि अनु. 25 और 26 में प्रदत्त धार्मिक स्वतन्त्रता का अधिकार राज्य को लोक प्रयोजन के लिए किसी पूजा के स्थान को अधिग्रहण करने से वर्जित नहीं करता है। प्रस्तुत मामले में मुम्बई प्रान्तीय नगर निगम अधिनियम, 1949 की धारा 212 की विधिमान्यता को चुनौती दी गई थी। इसके अन्तर्गत राज्य ने सड़क चैड़ी करने के प्रयोजन के लिए गुजरात राज्य के सूरत जिले में एक प्रमुख सड़क पर स्थित दो मस्जिदों के कुछ भाग को गिराने का आदेश दिया। उच्च न्यायालय ने इस्माइल फारूकी बनाम भारत संघ के मामले में उच्चतम न्यायालय के दिए निर्णय का अनुसरण करते हुए यह अभिनिर्धारित किया कि संविधान के अनु. 25 और 26 में प्रदत्त धार्मिक स्वाधीनता का अधिकार राज्य को किसी धार्मिक स्थल या उसके किसी भाग को लोक प्रयोजन हेतु अधिग्रहण करने से वर्जित नहीं करता है अतः सड़क को चैड़ी करने के उद्देश्य से उक्त मस्जिदों के कुछ भागों को गिराए जाने का आदेश विधिमान्य है। अनु. 25 और 26 धार्मिक प्रथा को संरक्षण प्रदान करते हैं जो धर्म का आवश्यक तत्व है। एक प्रथा धार्मिक प्रथा हो सकती है किन्तु वह उस धर्म का आवश्यक तत्व नहीं हो सकती है। प्रार्थना या पूजा करना एक धार्मिक प्रथा है किन्तु प्रत्येक स्थान पर पूजा करना धर्म का आवश्यक तत्व नहीं है, जब तक कि उस स्थान का उस धर्म में कोई विशेष महत्व न हो जो उसका आवश्यक तत्व बना देता हो। न्यायालय ने कहा कि यद्यपि राज्य को किसी सड़क को चैड़ी करने के लिए पूजा स्थल के अधिग्रहण की शक्ति प्राप्त है किन्तु उसे ऐसा करत समय यह देखना चाहिए कि किसी पूजा के स्थान का अधिग्रहण लोक प्रयोजन के लिए अपरिहार्य है। क्या साधारण जनता को इतनी असुविधा है कि किसी पूजा के स्थान को गिराना आवश्यक है? यदि ऐसा है

www.ignited.in

तो पूजा स्थल को गिराया जा सकता है। उक्त मामले में सड़क के चैड़ी करने के लिए दोनों मजिस्दों के कुछ भाग को गिराये जाने का नगर निगम का आदेश संवैधानिक है तथा विधिमान्य है।

धार्मिक स्वतंत्रता पर निर्बन्धन:-

धार्मिक स्वतंत्रता का यह अधिकार भी अन्य अधिकारों की ही भाँति आत्यन्तिक अधिकार नहीं है। अनु. 25(1) में ही सार्वजनिक व्यवस्था, सदाचार और स्वास्थ्य को बनाये रखने के लिए धार्मिक स्वतंत्रता पर राज्य विधि बना कर निर्बंधन लगा सकता है। इसके अतिरिक्त अनुच्छेद 25 के खण्ड (2) के उपखण्ड (क) और (ख) के अधीन राज्य इस अधिकार पर विधि बना कर निम्नलिखित आधारों पर निर्बन्धन लगा सकता है। इस प्रकार व्यक्ति की धार्मिक स्वतंत्रता पर राज्य निम्नलिखित आधारों पर विधि बना कर निर्बंधन लगा सकता है-

1. सार्वजनिक व्यवस्था, सदाचार और स्वास्थ्य बनाये रखने के लिए।

2. धार्मिक आचरण से सम्बद्ध किसी आर्थिक, वित्तीय, राजनैतिक या अन्य लौकिक क्रियाओं को विनियमित या निर्बन्धित करने के लिए।

3. सामाजिक कल्याण और सुधार के लिए अथवा हिन्दुओं की सार्वजनिक कार्य-संस्थाओं के सभी वर्गों और विभागों के लिए।

(1) सार्वजनिक व्यवस्था, सदाचार और जनता के स्वास्थ्य के आधार पर निर्बन्धन-धर्म के नाम पर कोई ऐसा कार्य नहीं किया जा सकता जो सार्वजनिक व्यवस्था, सदाचार एवं जनता के स्वास्थ्य के विरूद्ध हो। धर्म कभी अशान्ति पैदा करने वाला हो ही नहीं सकता। वह सदाचार एवं जन-स्वास्थ्य के प्रतिकूल भी नहीं हो सकता। अतः कहीं धर्म के नाम पर लोक-व्यवस्था, सदाचार अथवा जन-स्वास्थ्य को संकटापन्न स्थिति में डाला जाने वाला है, वहाँ उसे प्रतिबन्धित किया जा सकता है। उदाहरणार्थ-यदि धर्म के नाम पर कोई व्यक्ति अपने शरीर का अभद्र प्रदर्शन करना चाहता है।

तो वह भारतीय दण्ड संहिता की धारा 295-क में किसी व्यक्ति अथवा वर्ग की धार्मिक भावनाओं को ठेस पहुँचाने वाले कृत्य को दण्डनीय अपराध घोषित किया गया है। धारा 295-क के अनुसार-"जो कोई भारत के नागरिकों के किसी वर्ग की धार्मिक भावनाओं को आहत करने के विमर्शित विद्वेषपूर्ण आशय से उस वर्ग के धर्म या धार्मिक विश्वासों का अपमान उच्चारित या लिखित शब्दों द्वारा या संकेतों द्वारा या अन्यथा करेगा या करने का प्रयत्न करेगा, वह दोनों में से किसी भांति के कारावास से जिसकी अवधि तीन वर्ष तक की हो सकेगी, या जुर्माने से, या दोनों से दण्डित किया जायेगा।"

अजीज बासा बनाम भारत संघ के मामले में उच्चतम न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया कि 'स्थापना' और 'पोषण' दोनों शब्दों को साथ-साथ पढ़ा जाना चाहिये और इस अर्थ में किसी धार्मिक सम्प्रदाय को केवल उन्हीं संस्थाओं के पोषण का अधिकार होगा जिसकी वह स्थापना करता है। प्रस्तुत मामले में यह निर्णय दिया गया कि अलीगढ़ विश्वविद्यालय की स्थापना एक अधिनियम द्वारा की गई थी न कि मुसलमानों द्वारा; अतः वे उसके पोषण का वादा नहीं कर सकते हैं।

धर्म-विषयक कार्यों का प्रबन्ध करने का अधिकार-प्रत्येक धार्मिक सम्प्रदाय को अपने धर्म-विषयक कार्यों का प्रबन्ध करने का पूर्ण अधिकार है। शब्द 'धर्म विषयक कार्य' का अर्थ अत्यन्त व्यापक है इसे केवल विश्वास अथवा सिद्धान्त तक ही परिसीमित नहीं किया जा सकता है। इसमें धर्म के अनुसरण मे किया जाने वाला प्रत्येक कार्य सम्मिलित है। पूजा-अर्चना की रीति, धार्मिक समारोहों एवं अनुष्ठानों का आयोजन, आदि धर्म का अभिन्न अंग होने से धर्म-विषयक कार्य है।

इस तरह राज्य-निधि द्वारा पूर्ण रूप से पोषित शिक्षा संस्थाओं में धार्मिक पूर्ण रूप से वर्जित है। किसी न्यास अथवा विन्यास के अधीन स्थापित शिक्षा संस्थाओं में धार्मिक शिक्षा पर कोई प्रतिबन्ध नहीं है। लेकिन राज्य द्वारा मान्यता प्राप्त एवं सहायता प्राप्त शिक्षा संस्थाओं में धार्मिक शिक्षा विद्यार्थियों अथवा उनके संरक्षकों की सहमति से ही दी जा सकती है, अन्यथा नहीं।

निष्कर्ष

यूनियन ऑफ़ इण्डिया के मामले में उच्चतम न्यायालय द्वारा यह अभिनिर्धारित किया गया है कि जहाँ किसी राष्ट्रीय पाठ्यक्रम में धर्म की शिक्षा देने की बात नहीं हो, अपितु वह नैतिक मूल्यों की शिक्षा से सरोकार रखता हो, वहाँ केन्द्रीय सलाहकार बोर्ड के अनुमोदन की आवश्यकता नहीं है।

संदर्भ

कमिश्नर हिन्दू रेलिजस एन्डाउमेंट्स मद्रास बनाम श्री एल.टी. स्वामियार, ए.आई.आर. 1954 एस.सी. 282; जगन्नाथ रामानुजदास बनाम उड़ीसा राज्य, ए.आई.आर. 1954, एस.सी. 400, दरगाह कमेटी अजमेर बनाम सैय्यद हसन अली, ए.आई.आर. 1961, एस.सी. 1402: सेशामल बनाम तमिलनाडु राज्य 1972, 2 उम.नि.प. 746 ए.आई.आर. 1972 एस.सी. 1586, (1986) एस.सी.सी. 615, ए.आई.आर. 1983 एस.सी. 1 (1988) 1 एस.सी. 668, ए.आई.आर. 1995, एस.सी. 464, ए.आई.आर. 1998 गुजरात 234, ए.आई.आर. 1968 एस.सी. 622, ए.आई.आर. 2003 एस.सी. 3176

Corresponding Author

Dev Sharma Yajurvedi*

Research Scholar, Swami Vivekananda University, Sagar, Madhya Pradesh